International Journal of Yogic, Human Movement and Sports Sciences 2021; 6(2): 62-65

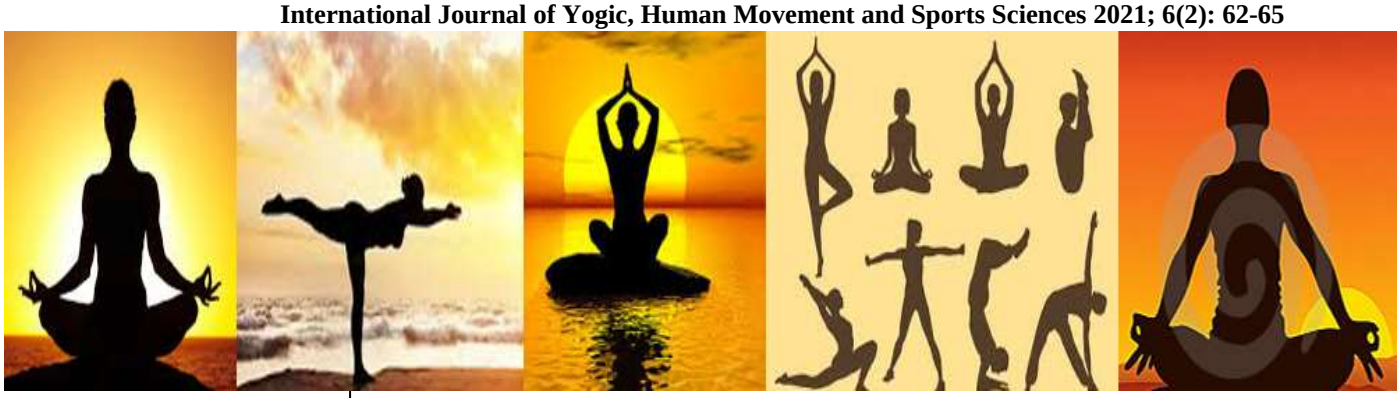

ISSN: 2456-4419
Impact Factor: (RJIF): 5.18
Yoga 2021; 6(2): 62-65
© 2021 Yoga
www.theyogicjournal.com
Received: 15-05-2021
Accepted: 17-06-2021

डॉ0 महेश कुमार मुछाल
एसोसिएट प्रोफेसर, अध्यापक प्रशिक्षण विभाग, दिगम्बर जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडौत, बागपत, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ0 महेश कुमार मुछाल
एसोसिएट प्रोफेसर, अध्यापक प्रशिक्षण विभाग, दिगम्बर जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बडौत, बागपत, उत्तर प्रदेश, भारत

विभिन्न गन्थों में योग की संकल्पना एवं महत्व

डॉ0 महेश कुमार मुछाल

सार
व्यक्ति के चरित्र निर्माण में योग की सर्वोच्च भूमिका है। योग मनुष्यों में मनुष्यता के मूल्यों को जागृत करता है। योग के अभ्यास से कई प्रकार के भाव जैसे क्षमा, दयाभाव, कृपालुता, ज्ञान एवं उदारता प्राकृतिक रूप से ही प्रस्फुलित होने लगती है। अतएव कोई भी शक्ति योग शक्ति के समान नहीं है और न ही योग से बढ़कर कोई मनुष्य का मित्र हो सकताहै। इसीलिए योग को भारतीय सभ्यता की भरी–पूरी सभ्यता कहा जाता है। योग का महत्व और उपयोग आधुनिक जगत में भी निरन्तर बढ़ रहा है। शिक्षा हमारे समाज में, जीवन का एक अभिन्न अंग है।

कूट शब्दः योग की सर्वोच्च भूमिका, क्षमा, दयाभाव, कृपालुता, ज्ञान एवं उदारता प्राकृतिक

प्रस्तावना
"योग" शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के शब्द "युज" से हुई है जिसका अर्थ जोड़ना और बांधना है, तथा ध्यान को एकाग्रचित करके इसे प्रयोग में लाना। इसका अर्थ संयोग या भावनाओं का आदान–प्रदान भी हैं। यह हमारी इच्छा का भगवान की इच्छा के साथ एक सच्चा मिलन है। योग एक व्यवहार है जो जीवन को उनके अवयवों से अलग करने के लिए चेतना के पदार्थों को आत्म ज्ञान की ओर केन्द्रित करता है।
योग शब्द का अर्थ– पाणिनी ने 'योग' शब्द की व्युत्पत्ति 'युजिर् योगे', 'युज समाधो' तथा 'युज् संयमने' इन तीन धातुओ से मानी है। प्रथम व्युत्पत्ति के अनुसार 'योग' शब्द का अनेक अर्थो में प्रयोग किया गया है। जैसे – जोड़ना, मिलाना, मेल आदि। इसी आधार पर जीवात्मा और परमात्मा का मिलन योग कहलाता है। इसी संयोग की अवस्था को "समाधि" की संज्ञा दी जाती है जो कि जीवात्मा और परमात्मा की समता होती है।
महर्षि पतंजलि ने योग शब्द को समाधि के अर्थ में प्रयुक्त किया है। व्यास जी ने 'योगः समाधिः' कहकर योग शब्द का अर्थ समाधि ही किया है। वाचस्पति का भी यही मत है।
संस्कृत व्याकरण के आधार पर 'योग' शब्द की व्युत्पत्ति निम्न प्रकार से की जा सकती है।

1. "युज्यते एतद् इति योगः –इस व्युत्पत्ति के अनुसार कर्मकारक में योग शब्द का अर्थ चित्त की वह अवस्था है जब चित्त की समस्त वृत्तियों में एकाग्रता आ जाती है। यहाँ पर 'योग' शब्द का उद्देश्य के अर्थ मे प्रयोग हुआ है।
2. "युज्यते अनेन अति योगः –इस व्युत्पत्ति के अनुसार करण कारक में योग शब्द का अर्थ वह साधन है जिससे समस्त चित्तवृत्तियों में एकाग्रता लाई जाती है। यही 'योग' शब्द साधनार्थ प्रयुक्त हुआ है। इसी आधार पर योग के विभिन्न साधनो को जैसे हठ, मंत्र, भक्ति, ज्ञान, कर्म आदि को हठयोग, मंत्रयोग, भत्ति योग, ज्ञानयोग, कर्मयोग आदि के नाम से पुकारा जाता है।
3. "युज्यतेऽस्मिन् इति योगः" –इस व्युत्पत्ति के अनुसार योग शब्द का अर्थ वह स्थान है जहाँ चित्त की वृत्तियाँ की एकाग्रता उत्पन्न की जाती है। अतः यहाँ पर अधिकरण कारक की प्रधानता है।

योग की परिभाषाएं
भारतीय दर्शन में योग विद्या का स्थान सर्वोपरि एवं विशेष है। भारतीय ग्रन्थो में अनेक स्थानो पर योग विद्या से सम्बन्धित ज्ञान भरा पड़ा है। वेदो, उपनिषदो,गीता एंव पुराणों आदि प्राचीन ग्रन्थों में योग शब्द वर्णित है। दर्शन में योग शब्द एक अति महत्त्वपूर्ण शब्द है जिसे अलग–अलग रूप में परिभाषित किया गया है।

योग सूत्र के प्रणेता महर्षि पतंजलि के अनुसार योग की परिभाषा

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' यो.सू.1/2

अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध करना ही योग है। चित्त का तात्पर्य, अन्तःकरण से है। बाह्यकरण ज्ञानेन्द्रियां जब विषयों का ग्रहण करती है, मन उस ज्ञान को आत्मा तक पहुँचाता है। आत्मा साक्षी भाव से देखता है। बुद्धि व अहंकार विषय का निश्चय करके उसमें कर्तव्य भाव लाते है। इस सम्पूर्ण क्रिया से चित्त में जो प्रतिबिम्ब बनता है, वही वृत्ति कहलाता है। यह चित्त का परिणाम है। चित्त दर्पण के समान है। अतः विषय उसमें आकर प्रतिबिम्बत होता है अर्थात् चित्त विषयाकार हो जाता है। इस चित्त को विषयाकार होने से रोकना ही योग है।
योग के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करते हुए महर्षि पतंजलि ने आगे कहा है–

'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्।। 1/3

अर्थात योग की स्थिति में साधक (पुरूष) की चित्तवृत्ति निरूद्धकाल में कैवल्य अवस्था की भाँति चेतनमात्र (परमात्म) स्वरूप रूप में स्थित होती है। इसीलिए यहाँ महर्षि पतंजलि ने योग को दो प्रकार से बताया है–
1. सम्प्रज्ञात योग
2. असम्प्रज्ञात योग

सम्प्रज्ञात योग में तमोगुण गौणतम रूप से नाम रहता है। तथा पुरूष के चित्त में विवेक–ख्याति का अभ्यास रहता है। असम्प्रज्ञात योग में सत्त्व चित्त में बाहर से तीनों गुणों का परिणाम होना बन्द हो जाता है तथा पुरूष शुद्ध कैवल्य परमात्मस्वरूप में अवस्थित हो जाता है।

हठयोग प्रदीपिका के अनुसार – योग के विषय में हठयोग की मान्यता का विशेष महत्व है, वहां कहा गया है कि–

सलिबे सैन्धवं यद्वत साम्यं भजति योगतः।
तयात्ममनसोरैक्यं समाधिरभी धीयते।। (4/5) ह0 प्र0

अर्थात् जिस प्रकार नमक जल में मिलकर जल की समानता को प्राप्त हो जाता है ; उसी प्रकार जब मन वृत्तिशून्य होकर आत्मा के साथ ऐक्य को प्राप्त कर लेता है तो मन की उस अवस्था का नाम समाधि है।यदि हम विचार करे तो यहां भी पूर्वोक्त परिभाषा से कोई अन्तर दृष्टिगत नही होता। आत्मा और मन की एकता भी समाधि का फल है। उसका लक्षण नही है। इसी प्रकार मन और आत्मा की एकता योग नही अपितु योग का फल है।

योगशिखोपनिषद् के अनुसार योग

योऽपानप्राणयोरैक्यं स्वरजोरेतसोस्तथा।
सूर्याचन्द्रमसोर्योगो जीवात्मपरमात्मनोः।
एवंतु द्वन्द्व जालस्य संयोगो योग उच्यते।। 1/68–69

अर्थात् अपान और प्राण की एकता कर लेना, स्वरज रूपी महाशक्ति कुण्डलिनी को स्वरेत रूपी आत्मतत्त्व के साथ संयुक्त करना, सूर्य अर्थात् पिंगला और चन्द्र अर्थात् इड़ा स्वर का संयोग करना तथा परमात्मा से जीवात्मा का मिलन योग है।

मैत्रायण्युपनिषद् के अनुसार योग

एकत्वं प्राणमनसोरिन्द्रियाणां तथैव च.।
सर्वभाव परित्यागो योग इत्यभिधीयते।। 6/25

अर्थात प्राण, मन व इन्द्रियों का एक हो जाना, एकाग्रावस्था को प्राप्त कर लेना, बाह्य विषयों से विमुख होकर इन्द्रियों का मन में और मन आत्मा में लग जाना, प्राण का निश्चल हो जाना योग है।

श्रीमद्भगवद्गीता में योगेश्वर श्रीकृष्ण के अनुसार योग

योगस्थः कुरू कर्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजयः।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।। 2/48

अर्थात् – हे धनंजय! तू आसक्ति त्यागकर समत्व भाव से कार्य कर।
सिद्धि और असिद्धि में समता–बुद्धि से कार्य करना ही योग हैं। सुख–दुःख, जय –पराजय, शीतोष्ण आदि द्वन्द्वों में एकरस रहना योग है।

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृतें।
तस्माधोग युज्यस्व योगः कर्मसुकौशलम्।। 2/50

अर्थात् कर्मो में कुशलता में कुशलता ही योग है। कर्म इस कुशलता से किया जाए कि कर्म बन्धन न कर सके। अर्थात् अनासक्त भाव से कर्म करना ही योग है। क्योंकि अनासक्त भावं से किया गया कर्म संस्कार उत्पन्न न करने का कारण भावी जन्मादि का कारण नहीं बनता। कर्मो में कुशलता का अर्थ फल की इच्छा न रखते हुए कर्म का करना ही कर्मयोग है।
पुराणो में भी योग के सम्बन्ध में अलग–अलग स्थानों पर परिभाषाएं मिलती है–

ब्रह्मप्रकाशकं ज्ञानं योगस्तत्रैक चित्तता।
चित्तवृत्तिनिरोधश्च जीवब्रह्मात्मनीः परः।। अग्निपुराण 183/1–2
अर्थात् ब्रह्म में चित्त की एकाग्रता ही योग है।
मदृयेकचित्तता योगो वृत्त्यन्तरनिरोधतः।। कूर्म पु.11
अर्थात् वृत्तिनिरोध से प्राप्त एकाग्रता ही योग है।

अग्नि पुराण के अनुसार – अग्नि पुराण में कहा गया है कि

आत्ममानसप्रत्यक्षा विशिष्टा या मनोगतिः।
तस्या ब्रह्मणि संयोग योग इत्यभि धीयते।। अग्नि पुराण (379) 25

अर्थात् योग मन की एक विशिष्ठ अवस्था है जब मन मे आत्मा को और स्वंय मन को प्रत्यक्ष करने की योग्यता आ जाती है, तब उसका ब्रह्म के साथ संयोग हो जाता है। संयोग का अर्थ है कि ब्रह्म की समरूपता उसमे आ जाती है। यह कमरूपता की स्थिति की येग है। अग्निपुराण के इस योग लक्षण में पूवेक्ति याज्ञवल्क्य स्मृति के योग लक्षण से कोई भिन्न्ता नही है। मन का ब्रह्म के साथ संयोग वृत्तिनिरोध होने पर ही सम्भव है।

महर्षि याज्ञवल्क्य के अनुसार योग की परिभाषा

'संयोग योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनो।'
अर्थात जीवात्मा व परमात्मा के संयोग की अवस्था का नाम ही योग है। कठोषनिषद् में योग के विषय में कहा गया है–
'यदा पंचावतिष्ठनते ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्।।
तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।
अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभावाप्ययौ।। कठो.2/3/10–11

अर्थात् जब पाँचों ज्ञानेन्द्रियां मन के साथ स्थिर हो जाती है और मन निश्चल बुद्धि के साथ आ मिलता है, उस अवस्था को

'परमगति' कहते है। इन्द्रियों की स्थिर धारणा ही योग है। जिसकी इन्द्रियाँ स्थिर हो जाती है, अर्थात् प्रमाद हीन हो जाता है। उसमें शुभ संस्कारो की उत्पत्ति और अशुभ संस्कारो का नाश होने लगता है। यही अवस्था योग है।.

स्कन्द पुराण के अनुसार

स्कन्द पुराण भी उसी बात की पुष्टि कर रहा है जिसे अग्निपुराण और याज्ञवल्क्य स्मृति कह रहे है। स्कन्द पुराण में कहा गया है कि–

यव्समत्वं द्वयोरत्र जीवात्म परमात्मनोः।
सा नष्टसर्वसकल्पः समाधिरमिद्यीयते।।
परमात्मात्मनोयोडयम विभागः परन्तप।
स एव तु परो योगः समासात्क थितस्तव।।

यहां प्रथम श्लोक में जीवात्मा और परमात्मा की समता को समाधि कहा गया है तथा दूसरे श्लोक में परमात्मा और आत्मा की अभिन्नता को परम योग कहा गया है। इसका अर्थ यह है कि समाधि ही योग है। वृत्तिनिरोध की 'अवस्था में ही जीवात्मा और परमात्मा की यह समता और दोनो का अविभाग हो सकता है। यह वात नष्टसर्वसंकल्पः पद के द्वारा कही गयी है।

लिंड्ग पुराण के अनुसार –

लिंग पुराण मे महर्षि व्यास ने योग का लक्षण किया है कि –सर्वार्थ विषय प्राप्तिरात्मनो योग उच्यते।
अर्थात् आत्मा को समस्त विषयो की प्राप्ति होना योग कहा जाता है। उक्त परिभाषा में भी पुराणकार का अभिप्राय योगसिद्धि का फल बताना ही है। समस्त विषयों को प्राप्त करने का सामर्थ्य योग की एक विभूति है। यह योग का लक्षण नही है। वृत्तिनिरोध के बिना यह सामर्थ्य प्राप्त नही हो सकता।

योग दर्शन के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य

- योगाचार और आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा एवं ध्यान को ाक्षार्थी या साधक कीदिनचर्या का सहज अंग बनाया जाये, जिससे शिक्षा व्यवस्था एवं प्रक्रिया का विकास हो सके।
- शिक्षार्थी का शारीरिक विकास करना।
- विद्यार्थी को अनुशासित बनाना।
- शिक्षार्थी के बुद्धि–विवेक का विकास करना।
- शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना।
- शिक्षार्थी को विविध दुःखो– आधिभौतिक, आध्यात्मिक तथा आधिदैविक के निवारण कीविधि बताना।
- शिक्षार्थी को कैवल्यपाद (मोक्ष) को प्राप्त करने के लिए तत्पर बनाना।

आज के समाज में शिक्षा व्यवस्था के अन्दर छात्र और शिक्षको के मध्य अधैर्य, सांवेगिक असन्तुलन, अमानवीयता, नैतिकता व संस्कृति की ह्रासता पायी जा रही है। अतः स्पष्ट है कि आज की शिक्षा व्यवस्था एक सभ्य सुसंस्कृत समाज बनाने में अपना योगदान नहीं दे पा रहीहै। इस क्षेत्र में हमें योग को एक सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आध्यात्मिक और शैक्षिक उपागम के रूप में प्रयोग करना होगा। प्रारम्भिक शिक्षा स्तर पर अनिवार्य रूप से योग का प्रयोग और योग से बच्चों को परिचित किया जाना चाहिये। कक्षा का आरम्भ और समापन कुछ सरलआसनों जैसे प्राणायाम आदि से होना चाहिये। विद्यालय मे प्रमुखतया एक योग अध्यापक की नियुक्ति होनी चाहिये। कभी–कभी उन्हें ऐसे स्थानों पर भी ले जाकर यह अभ्यास कराया जाना चाहिये। जहाँ वे प्रसन्न होने के साथ–साथ सुविधा पूर्ण हो। माध्यमिक स्तर व उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों के शिक्षा सस्थानों में दिन का प्रारम्भ इसी प्रकार योगाभ्यासो द्वारा किया जाना चाहिये। सर्वप्रथम उनकी व्यक्तिगत विभिन्नता को ध्यान मे रखते हुये सभी कार्यक्रमो काआयोजन होना चाहिये। सभी को बराबर ध्यान व सम्मान मिलना चाहिये। उनके मनोविज्ञान को समझते हुयें उन्हें योगाभ्यासो से निरन्तर परिचित किया जाना चाहिये। मानव संसाधन विकास मंत्री स्मृति ईरानी ने 22 जून 2015 को NCERT की ओर से तैयार किये गये छठी से दसवीं कक्षा तक के योग पाठ्यक्रम को जारी किया। योगाः ए'ऐल्दी वे ऑफ लिविंग' पुस्तक का अनावरण किया गया यह पुस्तक मोरारजी देशाई इन्स्टीट्यूट ऑफ योगा, नई दिल्ली एवं कैवल्यधाम, योग इन्स्टीट्यूट, पूणे और अन्य संस्थानों के सहयोग से तैयार की गयी है। सिलेबस के साथ ही इन कक्षाओं के लिये पाठ्य सामग्री भीजारी कर दी गयी है। इसके बाद केन्द्र सरकार की ओर से चलाये जाने वाले सभी स्कूलों के इन कक्षाओं मे योग विषय अनिवार्य रूप से पढ़ाया जाने लगेगा। इसी तरह CBSE से सचांलित होने वाले निजी स्कूलों को भी नौवीं और दसवीं मे यह विषय अनिवार्य रूप से लागू करना होगा। ईरानी जी ने कहा कि इस विषय में 80 प्रतिशत अंक व्यावहारिक परीक्षा के होगे, जबकि 20 प्रतिशत थ्योरी के होगे। इसी मौके पर छब्ज्म् की ओर से योग विषय के लिये अलग से तैयार किया गया। शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम भी जारी किया गया। इस प्रकार शिक्षा व्यवस्था में योग से निम्नलिखित लाभ है –

- जागरूकता का विकास करने में सहायक है।
- दृढ़ता व सृजनात्मक चेतना के विकास में सहायक है।
- सांवेगिक सन्तुलन शक्ति बढ़ती है।
- योग से विद्यार्थियों में ब्रम्हचर्य रक्षा में सहायक है।
- यह आत्म विश्वास को विकसित करने मे सहायक है।
- योग रस, रक्त आदि शरीर की धातुओं की समुचित रूप से वृद्धि करने में सहायक है।
- मुद्राओं का अभ्यास विद्यार्थियो को लम्बे समय तक अध्ययन में बैठने लिए सहायक है।
- नैतिक और मूल्यों के विकास में सहायक है।
- आलस्य को दूर करने में सहायक है।
- मनोवैज्ञानिक क्षमताओं का विकास कर मानसिक तनाव दूर करने मे सहायक है।
- विद्यार्थियों के स्वस्थ रहने की क्षमता बढ़ती है।
- स्वाभिमान को विकसित करने मे सहायक है।
- शरीर और मन में सम्बन्ध स्थापित करने मे सहायक है।
- विद्यार्थियों के मन को एकाग्र बनाने में सहायक है।
- चरित्र निर्माण में सहायक है।
- स्वाध्याय व स्वानुभूति में सहायक है।
- ऊर्जावान व उत्साहित बनाने में सहायक है।
- स्मरण शक्ति बढ़ती है।
- स्फूर्ति प्रदान करने में सहायक है।

महर्षि पतजँलि ने योग विद्या के रूप में ऐसी एक बेजोड़ संकटमोचक सीढ़ी प्रदान की है जिससे हम जीवन की ऊँचाइयों को प्राप्त कर सकते हैं। योग एक साधन हैं जिसके द्वारा हम स्वयं को सफलीभूत बना सकते हैं। यह साधारण एवं विद्वान दोनों प्रकार के मनुष्यों को परमात्मा से जोड़ने में सहायक है। वास्तविकता तो यह है कि योग हमें स्वस्थ शरीर, गहन विचारशीलता और परम आनंददायक ऊर्जा प्रदान करता है। यहीं समस्त उत्थानों का मूल स्त्रोत है और कभी न समाप्त होने वाला आध्यात्मिक आनन्द प्रदान करता है। योग के निरंतर अभ्यास से सभी भ्रम जो मनुष्य के मस्तिष्क को घेरते हैं, भाग जाते हैं। यहाँ तक कि, शारीरिक बैठने, खड़ा होने एवं चलने आदि की मुद्राएँ जो स्थान विशेष या समय विशेष पर सर्वाधिक प्रचलित हैं, को भी योग माना जाता है और ये मुद्राए शरीर को स्वस्थ रखने में सक्षम हैं। आजकल योग का उपयोग नवीन चिकित्सा के रूप में कई प्रकार के रोगों से सफलतापूर्वक छुटकारा पाने के लिए विश्वभर में किया जाने लगा है। समस्त प्राचीन भारतीय साहित्य में योग विद्या पर गहरा

चिंतन–अवलोकन प्राप्त होता है। हमारे महान संत, महात्माओं ने योग के निरन्तर अभ्यास और शिक्षण के द्वारा ही परिपूर्णता एवं असीम शक्तियाँ प्राप्त कीं। योग के महत्व को उजागर करते हुए उत्तर गीता में संदेश है कि योग से सामंजस्य बिठाकर मनुष्य रातोरात में जन्मों के पापों से मुक्त हो सकता है।

व्यक्ति के चरित्र निर्माण में योग की सर्वोच्च भूमिका है। योग मनुष्यों में मनुष्यता के मूल्यों को जागृत करता है। योग के अभ्यास से कई प्रकार के भाव जैसे क्षमा, दयाभाव, कृपालुता, ज्ञान एवं उदारता प्राकृतिक रूप से ही प्रस्फुलित होने लगती है। अतएव कोई भी शक्ति योग शक्ति के समान नहीं है और न ही योग से बढ़कर कोई मनुष्य का मित्र हो सकता है। इसीलिए योग को भारतीय सभ्यता की भरी–पूरी सभ्यता कहा जाता है। योग का महत्व और उपयोग आधुनिक जगत में भी निरन्तर बढ़ रहा है। शिक्षा हमारे समाज में, जीवन का एक अभिन्न अंग है। पुरातन काल से ही हमारा भारतवर्ष विश्व को धार्मिक, साँस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं शैक्षणिक विचार धाराएँ प्रदान करता आया है। दुर्भाग्य से पश्चिमी सभ्यता के अन्धाधुंध अनुशरण से भारत में धार्मिक–आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा का विलोप हो रहा है। हमारे पूर्वजों की भाँति, आधुनिक जगत के नेताओं को भी विद्यार्थियों के चँहमुखी विकास के लिए नैतिक शिक्षा एवं योग शिक्षा पर बल देना चाहिए। आधुनिक शिक्षा पद्धति में योग को सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है। योग विश्व के लिए उपकारी हैं। योग धर्म का एक अंग होने के नाते प्रत्येक मनुष्य के लिए जीवन का भी भाग हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. स्वामी सत्यानन्द सरस्वती, ''योग निद्रा'', संस्करण परिवर्द्धित 2002, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार ।
2. स्वामी निरंजनानंद सरस्वती, ''प्राण–प्राणायाम–प्राण विद्या'', वर्ष 2001, संस्करण प्रथम, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार।
3. श्री स्वामी ओमानंद तीर्थ, ''पातन्जल योग प्रदीप'', वर्ष 2001, संस्करण बीसवाँ, गीता प्रेस गोरखपुर ।
4. मुछाल एम0के0 ''मानसिक अवसाद एवं योग'', 'योजना', दिसम्बर 2005
5. नागेन्द्र एच0आर0, ''प्राणायाम कला और विज्ञान'', वर्ष 1999, संस्करण द्वितीय, विवेकानन्द केन्द्र योग प्रकाशन, बैंगलोर।
6. अग्निपुराण–गीताप्रेस गोरखपुर श्रीमद्भगवद्गीता– गीताप्रेस गोरखपुर पण्डया, प्रणव योग से समृद्ध होता जीवन, सप्तरंग, दैनिक जागरण, 17जून 2015.
7. रविशंकर, श्री श्री ऊर्जा एवं उत्साह का योग, 21 जून 2015 दैनिक जागरण, पृष्ठ 16,17.
8. मोदी संग पूरी दुनिया योग पथ परण (2015, जून 22)ण दैनिक जागरण, पृष्ठण1,12,15.
9. मिश्र, गिरीश्वरण जीवन जीने की कला, (2015, जून 19)ण दैनिक जागरण, पृष्ठण16.
10. स्वामी निरजनानन्द सरस्वती – धेरण्ड संहिता वर्ष 1997, संस्करण प्रथम, बिहार योग भारती मुगेर बिहार प्रो0 ईश्वर भारद्वाज – मानव चेतना सत्यम पब्लिकेसन्स दिल्ली।
11. शंकर, गणेशण (1988) होलिस्टिक एपरोच आफ योगाण्नई दिल्ली रू आदित्य प्रकाशन.
12. शर्मा श्रीरामण (1988) व्यक्तित्व विकास हेतु उच्च स्तरीय साधनाएँण मथुरा रू अखंड ज्योति संस्थान
13. मुछाल, एम0 के0 (2004) योग के वैज्ञानिक पहलू कुरूक्षेत्र, 51,(2)
14. आयंगर, बी0 के0 एस0 (2005) सभी के लिए योगण नई दिल्ली रू भारत प्रकाशन.
15. आचार्य, बाल कृष्णण (2007) विज्ञान की कसौटी पर योगण हरिद्वार रू पतंजलि योगपीठ.